International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 681-687

पर्यावरण संरक्षण एवं शिक्षा में प्रकृति के साथ अंतरंग सम्बन्ध के अनुभव का महत्व

[1] अजेय रस्तोगी, [2] नवीन चन्द्र पाण्डे

[1] फाउण्डेशन फॉर कनटेमप्लेशन ऑफ नेचर, उत्तराखण्ड, भारत।
[2] वनस्पति विज्ञान विभाग, डी0 एस0 बी0 परिसर, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत।

सारांश
जीवन में आनंद के लिए उपभोक्तावाद को एक प्रमुख कारक माना जाने लगा है, इसके साथ ही समाज में मानसिक अवसाद एवं मनोदैहिक विकार भी बड़ रहे हैं। पैसे और आधुनिक सुख–सुविधाओं के पीछे अंधी दौड़ में सांमाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों एवं पर्यावरण की अनदेखी हो रही है। वैज्ञानिक शोधों से यह स्पष्ट हो रहा है कि केवल आधुनिकता एवं पैसे के बल पर आंनददायक जीवन नहीं बिताया जा सकता हे, जिसके चलते हमारा जीवन काफी हद तक बनावटी होता जा रहा है। यह पता चल रह रहा हे कि मनुष्य अपनी आन्तरिक एवं बाह्य प्रकृति से जितना दूर होता जा रहा है उतना ही असंतुष्ट भी होता जा रहा है। भावात्मक सन्तुलन के लिए प्रकृति के साथ सामांजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है। इस पैपर में मनुष्य का भौतिक एवं भावात्मक स्तर पर प्रकृति के साथ सम्बन्ध उजागर किया गया है। प्रकृति के साथ अंतरंग सम्बन्ध अनुभव के लिए तटस्थ अवलोकन की विधि का वर्णन किया गया है।

संकेत शब्दः प्रकृति प्रेम, ध्यान, भावनात्मक सम्बन्ध, मनोस्थिति

प्रस्तावना

सतत् विकास एवं पर्यावरण संरक्षण की मुख्य चुनौती

पर्यावरण का बिगड़ता सन्तुलन 21 वीं सदी की सबसे मुख्य समस्याओं में से एक है। दुनिया के समस्त नागरिकों को यह प्रभावित कर रहा है, चाहे वे किसी भी देश, धर्म, जाति, लिंग, आयु के हों। सोचने की बात यह है कि यद्यपि यह लेख पर्यावरण के बारे में हैं, तब भी हमें देश, जाति, धर्म इत्यादि का उल्लेख करना पड़ रहा है। इसकी आवश्यकता शायद इसलिए पड़ रह रही हैं क्योंकि समाज बहुत ही संकुचित मानसिकता के युग में प्रवेश करता जा रहा है। अपनी आवश्यकताओं के अनुसार हम परिवार में, समाज में, राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय मुद्दों में सहयोग करते हैं और बहुत सारे मुद्दों में असहयोग करते हैं। विचारणीय है कि यह सम्बन्ध मूल्यों पर आधारित ना होकर मात्र लाभान्वित कारकों से बनते बिगड़ते रहते है, और एक पेचिदा स्थिति पैदा करते रहें है। जब आन्तरिक सम्बन्धों की सरलता ना होने के कारण परिवार एवं पड़ोस स्तर पर आत्मीयता समाप्त होती जा रही है तो पर्यावरण संरक्षण के लिए इकजुट होना एक बहुत ही कठिन कार्य लगता है। शिक्षा का स्तर बड़ने से, विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्रों में प्रगति से, नये नियमों एवं कानूनों की वृद्धि से इस संकुचित सोच का दायरा बड़ा ही है अपितु कम होने के।

अन्तराष्ट्रीय स्तर पर भी नागरिकों के जीवन स्तर को बढ़ानें में, सहयोग एवं सम्बन्ध मजबूत करने की पहलों की कमी नहीं है। यह देखकर पीड़ा होती है कि जीवन स्तर को बेहतर बनाने की लिए किये जा रहे प्रयास पर्यावरण संरक्षण को महत्व नहीं दे पा रहे हैं। जीवन स्तर के आयामों की चर्चा भी बहुत विभाजित है। कुछ लोगों का मानना है कि आधुनिक उपकरणों से समृद्ध जीवन उच्च कोटी के जीवन स्तर का दर्पण है। क्रय–शक्ति एवं उपभोक्तावाद इनके मानक है। कुछ अन्य लोगों का मानना है कि उपभोक्तावाद से प्राकृतिक संसाधनों पर इतना प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है कि बहुत सारे अन्य लोग मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित रह जाते है। इसके साथ ही पर्यावरण की स्थिति जैसे जलवायु परिवर्तन आदि भी आर्थिक एवं सामाजिक रूप से कमजोर लोगों को ही अधिक प्रभावित करते हैं। क्योंकि इनके समुदायों के पास सीमित विकल्प होते हैं, इन कारणों से विकासशील देशों के राजनैयिकों की यह दलील है कि उनकों भी विकास दर तेजी से बढ़ाकर अपने नागरिकों को आधुनिक जीवन शैली से समृद्ध करना है। एक उदाहरण से इसको समझा जा सकता है। एक देश अपनी विकास दर तेज करने के लिए पर्यावरण और सामाजिक मूल्यों को ताक पर रख सस्ता सामान बना कर अधिक से अधिक मात्रा में निर्यात कर रहा है। अन्तराष्ट्रीय चर्चा में जब इस मुद्दे को उठाया जाता है, तो उनकी दलील है कि जो देश सस्ते सामान का आयात कर रहे है वह इसके जिम्मेदार हैं क्योंकि इस अन्तराष्ट्रीय माँग के कारण ही सस्ते सामान का उत्पादन बड़ रहा है। जो देश आयात कर रहे हैं, वह कहते हैं कि उत्पादनकर्ता पर्यावरण एवं सामाजिक कारकों को ध्यान में रखेगें तो सामान इतना सस्ता नहीं होगा और माँग अपने आप घट जायेगी।

अब इस पर चर्चाओं के दौर पर दौर चल रहे है, और कोई भी पर्यावरण के वास्तविक हित के लिए आगे आने को तैयार नहीं है। इस बात की तह पर कोई नए तथ्य नहीं है। उत्पादनकर्ता देश को रोजगार के अवसर बड़ाने एवं विकास दर तेज रखने की आवश्यकता है तथा आयात करने वाले देश के नागरिकों को सस्ते सामान की। तो कहाँ से इस बात का ऐसा निष्कर्ष निकलेगा जो पर्यावरण संरक्षण को मुख्य मानता हो। इसलिए प्राकृतिक संसाधनों के बहुत सारे विद्वान, दार्शनिक, परम्परागत संरक्षक आदि इस बात को उठा रहे हैं कि अगर वास्तव में दुनिया में सतत विकास और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देना है तो आधुनिक सोच में आमूल–चूल परिवर्तन करना होगा। इस दौड़ में जब सुविधाओं में कोई भी कमी करने को तैयार नहीं है तब यह रास्ता सुझाया जा रहा है कि ऐसे उत्पादों पर जोर दिया जाये जो पर्यावरण पर कम दुष्प्रभाव डालते हों, हालांकि ऐसे प्रयास सराहनीय है [1] की विश्व प्रकृति संगठन की एक रिर्पोट में यह सिद्ध किया गया है कि आधुनिक जीवन शैली में आमूलचूल परिर्वतन के बिना व्यावहारिक रूप से पर्यावरण संरक्षण सम्भव नहीं है।

व्यावहारिक परिवर्तन की चुनौती

पर्यावरण समस्याओं के समाधानों के लिए शिक्षा, शोध, विश्लेषण, गोष्ठियों एवं कानूनों की असाधारण बढ़ोतरी हुई है एवं साथ ही शिक्षा एवं पर्यावरण विशेषज्ञों की बाढ़ सी आ गयी है। बौद्धिक उपायों से हमनें कहीं पर आशिंक सफलता भी पायी है। आधुनिक विज्ञान के साथ परम्परागत विज्ञान एवं पुरातन रीति–रिवाजों का अध्ययन भी हुआ है। विज्ञान ने बहुत सारी पारम्परिक व्यवस्थायें जैसे कि धार्मिक एवं पवित्र वन स्थलों के संरक्षण को पारिस्थितकीय तंत्र को बनाये रखने में एक महत्वपूण कड़ी माना है। प्राकृतिक संसाधनों के सतत् उपयोग के परम्परागत तौर–तरीकों एवं सामाजिक संस्थाओं को व्यावहारिक स्तर पर बहुत कारगर भी पाया गया है। हॉलाकि कुछ लोगों का यह मानना है कि पुरातन सामाजिक व्यवस्था वर्ग–विशेष के लिए अहितकर भी होती थी, पर क्या आज भी व्यवस्था सभी के लिए उचित एवं हितकर है। इस बहस का एक और पहलु यह भी है कि पुरानी/परम्परागत समाजिक व्यवस्थायें बिखर रही है एवं लोगों की उसमें आस्था भी बहुत कम हो गयी है। यहाँ तक की पवित्र वनों एवं धार्मिक स्थलों का व्यवसायीकरण एवं शोषण आरम्भ हो गया है। अतः न ही पारम्परिक व्यवस्थायें कारगर सिद्ध हो रही है और ना ही आधुनिक।

इस पर्यावरण संरक्षण की पहेली को किस प्रकार सुलझाया जाये। क्या इस समस्या का मूलभूत कारण कहीं और है। आज अन्तराष्ट्रीय स्तर पर अराजकता एवं अशान्ति का वातावरण सिर्फ पर्यावरण समस्याओं से ही नहीं है। हिंसा, नशें की दवायें, भष्टाचार एवं विस्थापन से आपालकाल जैसा वातावरण विश्व में व्याप्त है। कई बार पर्यावरणीय समस्यायें इनके आगे साधारण प्रतीत होती हैं। एक गहराई से विश्लेषण करने पर ऐसा प्रतीत होता है। ये मानवीय समस्यायें एक दूसरे से सम्बन्धित है। इनकी जड़ में सम्भवतः यह है कि आपसी सौहार्द, प्रेम एवं एक–दूसरे के दुख के प्रति असहिसुष्णता का भाव है। पर्यावरण के दुष्प्रभाव भी इसी मानसिकता का शिकार है। क्योंकि जब हम अपने मानवीय सम्बन्धों में विचारशील नहीं है तो अन्य जीव–जन्तुओं को खयाल कैसे रख सकेगें। हॉलाकि हम सब पर्यावरण का हिस्सा है इसलिए कई दार्शनिकों ने मानव को अन्य जीव–जन्तुओं के अभिभावक के रूप में माना है। आज के युग में मानव को यह याद दिलाना पड़ता है कि वह भी एक मौलिक प्राणी है। क्योंकि अन्य जीवों की अपेक्षा मनुष्य अपनी सोच एवं कर्मों एवं तकनीकी प्रणाली से पर्यावरण से दूर होता जा रहा है।

मानव का प्रकृति के साथ सम्बन्ध बहुत तेजी के साथ घट रहा है। आधुनिक समय में हमारे कार्य क्षेत्र एवं जीवन शैली में जहाँ प्रकृति से भौतिक दूरी तो बढ़ी है साथ ही मानसिक दूरी भी बढ़ी है। विज्ञान एवं तकनीकी संसाधनों से ऐसा प्रतीत होने लगा है कि जैसे सब कुछ हमें बिना प्रकृति की देन के ही प्राप्त हो रहा है। इसी मानसिकता के चलते उपभोक्तावाद बढ़ रहा है। अब मौसम के अनुकूल खान–पान, फल सब्जियों आदि की उपलब्धता का कोई मायने नहीं रह गया है। सम्भवतः बहुत लोगों को यह पता भी न हो कि प्राकृतिक फसल चक्र के अनुसार किस मौसम में कौन सी चीजें उपलब्ध होती है। दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने को इस उपभोक्तावाद संस्कृति ने जोड़कर एक वैश्विक गाँव के रूप में परिवर्तित कर दिया है। इस आयाम का एक पहलू यह है कि मनुष्य अब मानसिक रूप से अपनी विश्लेषण क्षमता को भावानात्मक क्षमताओं से कहीं अधिक उपयोग करने लगा है।

भावानात्मक असन्तुलन की समस्या प्रकृति से दूरी के कारण और बढ़ रही है। प्रकृति का तात्पर्य बाह्य एवं आन्तरिक दोनों से ही है। जिन वैज्ञानिकों ने मनुष्य और प्रकृति के साथ सम्बन्ध का अध्ययन किया है [2, 3, 4] उनका मानना है। कि प्रकृति में समय बिताने से नकारात्मक स्वभाव जैसे उत्तेजना, निराशा एवं चिन्ता इत्यादि से छुटकारा मिलता है और सकारात्मक भावनाओं स्वास्थ्य और ज्ञान सम्बन्धी क्षमता का विकास होता है। इस समझ के आधार पर कुछ देशों ने नगर योजनाओं में प्रकृति का समावेश आरम्भ कर दिया है। जैसे निदरलेण्ड डच कॉउनसिल फॉर रिर्सज ऑन स्पेचियन प्लेनिंग [5, 6]।

फ्रीडिक्सन इट एल के अनुसार सकारात्मक भावनायें और गहरी संवेदनायें मनुष्य के व्यवहार को अत्यन्त प्रभावित करती है। इसमें एक विरोधाभास सा प्रतीत होता है क्योंकि आनन्द, कृतज्ञता, रूचि एवं सन्तोष की सकारात्मक भावनायें क्षणिक होती है, तब भी वे नकारात्मक भावनायें जो हमें जकड़े रहती है को उखाड़ फेकने में सहायक होती है।

इनके शोध से पता चलता है कि जीवन में सौद्दार्द [7], वैवाहिक, सुख–शान्ति [8], समृद्धि [9], बेहतर शारीरिक स्वास्थ्य [10, 11]। ऐसे लोग जो सकारात्मक भावनाओं का अनुभव करते रहते है, वे दीर्धआयु भी होते है [12, 13, 14]।

अतः यह प्रतित होता है कि दया, सहानुभूति, करूणा, इमानदारी, सत्यनिष्ठा, सेवा इत्यादि भावनायें आज भी मानवीय समस्याओं से निजात पाने में बहुत मदद्गार साबित हो सकती है। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक शोषण, हिंसा, भ्रष्टाचार एवं अहितकर सामाजिक कार्यों से उपजी समस्यायें कुछ हद तक सकारात्मक भावनाओं से सुलझायी जा सकती है। कई समाज एवं कुछ राष्ट्र इस दिशा में कार्यरत हो भी गये है। अपने देश का विकास सकल घरेलू उत्पाद में ना देखकर सकल प्रसन्नता में देख रहे है यह इस बात को सिद्ध करता है कि तकनीक और भौतिक उपयोग की उच्च वस्तुओं का अर्पूण भण्डार भी लोगों की प्रसन्नता का सही द्योतक नहीं है। यह निष्कर्ष निकालना कोई कठिन नहीं है कि पर्यावरण संरक्षण एवं शान्ति के लिए सीमित साधनों की ही आवश्यकता है। अतः इस दृष्टिकोण को आगे बढ़ाने के लिए साधन, प्रशिक्षण एवं योजनाओं को स्वरूप देनें की अत्यन्त आवश्यकता है।

चित्र 1: घर के अन्दर फूल पत्तियों को प्राकृतिक अवलोकन का माध्यम बनाना।

उचित साधन एवं तकनीकों की चुनौती

एक बार पुनः यह देखना होगा कि हमें ऐसे दो पहलू है जिन पर कार्य करना है। एक पहलु यह है कि किस प्रकार मानव का प्रकृति के साथ सम्बन्ध प्रगाण करना है एवं दूसरा पहलु

यह है कि जीवन में सकारात्मक भावनाओं कि सम्भावनायें बढ़ानी है। इन दोनों पहलुओं को साथ ही देखना होगा। क्योंकि अवधारणा यह है कि सूक्ष्म आनन्ददायक एवं सकारात्मक भावनायें प्रकृति के सम्बन्ध में उपजती है। जो हमें प्रकृति के लिए संरक्षण करने में प्रोत्साहन प्रदान करती है। चलिए यह देखते है कि हमारे सीखने के लिए कौन से तरीके प्रयोग हो रहे है। यह प्रमुख तीन प्रमुख तरीके सज्ञानात्मक, अनुभवजन्य एवं मननशील है।

संज्ञानात्मक

यह एक प्रमुख तरीका है जो ज्ञान को प्रदान करने के लिए उपयोग किया जाता है। इसमें हम पड़ते, लिखते है एवं सुनते है। विशेष रूप से ज्ञान अर्जन का माध्यम बनाते है। आज के युग में यह सबसे अधिक प्रचलित तरीका है। पर्यावरण विज्ञान की योग्यता के लिए भी विद्यालय के आरम्भ से विश्व विद्यालय तक असीम जानकारी उपलब्ध करा दी गयी है। इसका मुख्य उद्देश्य प्रकृति, जीव–जन्तुओं एवं पारिस्थितकीय तंत्र के बारे में जानकारी बढ़ानी है। शिक्षा के साथ–साथ अन्य स्रोत जैसे फिल्में, टेलीविजन, जानकारी कार्यक्रम, सेमीनार एवं अन्य तरीकों से भी पर्यावरण की जानकारी का प्रचार–प्रसार चल रहा है। यह सब संज्ञानात्मक प्रयासों की श्रेणी में आता है। इस तरीके से जहाँ मानसिक रूप से बहुत ज्ञान एवं जानकारी एकत्रित हो जाती है, भाषा का भण्डार जमा हो जाता है परन्तु भावानात्मक संवेदनाओं को प्रज्जवलित कर हमें अपने व्यवहार को परिवर्तित करने में सहायता नहीं मिल पाती है। अतः वास्वतिक क्रियालकलापों में वृद्धि कम ही होती है और ज्ञान सतह ही रूप मानसिक रूप से रह जाता है।

अनुभवजन्य

अनुभवजन्य तरीके से सीखने का तात्पर्य यह है कि हम सिर्फ सुनकर, पढ़–लिखकर ही नहीं सीखते है। अपितु व्यवहार में लाकर निपुणता और कौशल को निखारते है। इसलिए काफी शैक्षिक योग्ताओं में काम करने का अनुभव अर्निवाय माना जाता है। पर्यावरण शिक्षा में प्राकृतिक कैम्प, और पर्यटन अभ्यारणों में भम्रण इत्यादि को प्रमुखता प्रदान की गयी है। प्रकृति का भम्रण लोगों को काफी भाता है एवं प्रचलित है। कुछ विशेष प्रयास जैसे इकोटूरिज्म इत्यादि अनुभवजन्य ज्ञान को बढ़ाने में सहायक है किन्तु फिर भी ऐसा लगता है कि जब तक हम उस वातावरण में होते है तब जितना हम प्रकृति को महसूस करते है वह संवेदना वापस आकर हमको इतना प्रभावित नहीं कर पाती है कि हम अपने व्यवहार को प्रकृति के हित में बदलने का प्रयास करें।

मननशील

मननशील तरीके का तात्पर्य है कि हम लोग हर एक पल सचेत रहें। यह चेतना मानसिक सोच, चिन्ता, विश्लेषण अथवा मूल्याकंन से दूर एक तटस्थ चित्त को दर्शाती है। कोई भी कार्य एवं गतिविधि मननशील प्रकार से की जा सकती है जैसे लिखना, पढ़ना, सुनना, खाना, क्रय–विक्रय, खेलना इत्यादि। मननशील प्रकार से सीखने को तीन विशेषताओं से अविभूत माना गया है।

1. नवीन अनुभव का अनवरत प्रवाह।
2. नवीन जानकारियों के प्रति खुलापन।
3. एक से अधिक आयामों को परिपेक्ष्य [15]।

जो विद्यार्थी मननशील प्रक्रिया से सीख रहे है वे कक्षा में किसी भी विषय को एक विस्तृत रूप में देखते है। जेजोनक [16] के अनुसार मननशील तरीके का उद्देश्य मनोयोग एवं भावनात्मक सन्तुलन विकसित करता है। अन्तदृष्टि एवं सृजनात्मक क्षमताओं को बढ़ाता है। सकारात्मक सुधार लाती है। हम जिन सामाजिक समस्याओं के लिए चिन्तित है। संभवतः उनके लिए मननशील प्रकार से शिक्षा अधिक उपयोगी प्रतीत होती है। साथ ही सृजनात्मकता एवं अनुभवजन्य प्रकारों का भी कम महत्व नहीं है। सभी प्रकारों का सामांजस्य एवं उचित उपयोग प्रभावकारी साबित हो सकता है। अब हम मननशील प्रकार एवं उसका पर्यावरण शिक्षा में उपयोग की चर्चा कुछ विस्तार से करेंगें रसतोगी [17] ने एक विशेष तकनीक जिसको प्रकृति का तटस्थ अवलोकन के नाम से पुकारा है उसका वर्णन निम्न है।

सहजता

कोई भी एक प्राकृतिक दृश्य चुनकर सहजता से बैठकर उसको निहारियें। यह कोई भी सामान्य दृश्य हो सकता है, जैसे खेत, बगीचा, जंगल, फूल, पत्तियाँ, पेड़, पत्थर, बहता पानी, नदी–नाले, सागर, आसमान, बादल, आदि। अगर इनकी उपलब्धता नहीं हो तो घर के अन्दर ही कोई गमला, फूल–पत्तियाँ, बेल, शंख, आदि को माध्यम बनाया जा सकता है। आँखों को खुला रखना है एवं पलक झपकने में कोई संकोच नहीं करना है। यदि थकान लगे तो आँखें बंद भी कर सकते है, परन्तु यदि ध्यान इधर–उधर भटकने लगे तो पुनः आँखे खोलकर तटस्था से निहारना प्रारम्भ कर दें। प्रकृति में सहज आँख खोले रखने से सहायता मिलती हैं क्योंकि प्रकृति हमारी सारी इन्द्रियों का समावेश कर लेती है। इन्द्रियों जैसे (कान, आँख, नाक, त्वचा) प्राकृतिक ध्वनियाँ गन्ध, त्वचा के साथ स्पर्श इत्यादि का आभास एकाग्रता में सहयोग करता है।

तटस्थता

मस्तिष्क की तटस्थता का तात्पर्य यह है कि निहारी जाने वाली वस्तु अथवा परिदृश्य का अवलोकन करते समय उसके रूप, रंग, गुण, आकार, उपयोग आदि के बारे में मस्तिष्क से कोई भी विचार नहीं करना है। यह सिद्धान्त प्रसिद्ध दार्शनिक इम्मानुअल काण्ट द्वारा दिया गया था। इस सिद्धान्त के पीछे यह अवधारणा है कि कोई भी सुखद अनुभुति अन्य कामनाओं को जन्म देती है और इससे वर्तमान में अनुभव की गहन अनुभूति नहीं हो पाती है। यह भाग अतीइन्द्रीय अथवा भावातीत ध्यान से सम्बन्धित है। यह विचार हमें अनुभवों से जुड़ने में मदद करता है। स्वतन्त्रता के मूल आधार तक ले जाता है। कामनाओं से मुक्ति लगभग सभी धर्म, मतों एवं आध्यात्मिक परम्पराओं में निहित है। कान्त ने वर्तमान में आकस्मिक मिलन के सिद्धान्त के रूप में तटस्थता को प्रचलित किया।

सहृदयता

सहृदयता, सकारात्मक भावनाओं जैसे विश्वसनीयता, निष्ठा, दया, करूणा, प्रेम, सहानुभुति, सम्मान आदि की जननी है। इसके अन्तर्गत मन में प्रकृति के प्रति शुभ विचार अथवा कृतज्ञता की भावना एक बार लानी है और फिर बस सहजता एवं तटस्थता के साथ बैठे रहना है। विश्वास एवं प्रेम से भरे सम्बन्ध आन्तरिक, मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ्य होने की भावना प्रदान करते है साथ ही जीवन में सौहार्द एवं आशा का संचार करते है।

हचरसन [18] स्टनफोड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक ने यह निष्कर्ष निकाला कि सहृदयता सामाजिक स्तर पर जुड़ाव लाती

हैः मनुष्य प्रजाति अपने अस्तित्व के लिए एक दूसरे के साथ लाभकारी सम्बन्ध बनाने में निहित है। बिरीवर [19] हमारे अस्तित्व की कड़ी विश्वास और प्रेम पर आधारित है
बोयमिसटर एवं लेरी [20] मानते हैः दूसरों के साथ सकारात्मक सम्बन्ध हमारी मानसिक, शारीरिक एवं आत्मिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है [21, 22], और दूरसम्बन्ध, निराशा और अन्य व्याधियों को बढ़ाते है [23, 24]। सहजता, तटस्था से बैठकर अपने मन में प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव लाये। यह भाव एक बार लाना ही काफी है और प्रकृति के बारे में विस्तृत चिन्तन की आवश्यकता नहीं है।

चित्र 2: इण्टरनेशनल सेंटर फार थियोरेटिकेल साईंस वर्कशाप के प्रतिभागी प्रकृति का तटस्थ अवलोकन करते हुए।

अभ्यास का समय एवं प्रभाव

सुझाव है कि अभ्यास की अवधि लगभग 30 मिनट हो। वैज्ञानिक अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि मस्तिष्क शान्त होने के लगभग 22 मिनट पश्चात् शारीरिक क्रियाओं को एक गहन विश्रान्ती की स्थिति मिलती है [25]। सजग मस्तिष्क आधारित तनाव मुक्ति एवं सूक्ष्म आन्तरिक क्रियाओं के सन्तुलन की यह विधि आधुनिक जीवनजन्य रोगों की चिकित्सा में एक महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। गत पाँच वर्षों में सैकड़ों प्रतिभागियों के अनुभव के आधार पर हमने 20–40 मिनट का समय उपयुक्त पाया है।

अभ्यास के परिणाम

ध्यानकर्ता गहन विश्रान्ति की अवस्था में एक आन्तरिक सुख से अभिभुत हो जाता है। हॉलाकि यह एक व्यक्तिगत अनुभव है परन्तु आधुनिक विज्ञान मस्तिष्क की क्रियाओं, मनोवैज्ञानिक अवस्थाओं, शरीर की आन्तरिक क्रियाओं एवं चित्त की मनोदशा इत्यादि को मापने के लिए प्रयत्नशील है।
रूबिया [26] ने वैज्ञानिक अध्ययनों की समीक्षा कर ध्यान से होने वाले लाभों के बारे में विस्तार से लिखा है। उनका कहना है कि ध्यान से अनावश्यक सोच–विचार काफी कम हो जाते है, जिससे मानसिक एवं शारीरिक शान्ति मिलती है, तनाव में कमी आती है। मनोभावनात्मक स्थिरता एवं एकाग्रता का विकास होता है जो शरीर की क्रियाओं में स्वाचालित एवं अन्तस्रावित क्रियाओं में सामांजस्य लाता है, मस्तिष्क की तत्रिंकाओं में व्यवस्थापन लाता है एवं दुश्चिन्ता विकारों में कमी लाता है। ध्यान के सकारात्मक परिणामों के फलस्वरूप ही समाज में इसका प्रचलन तेजी से बड़ रहा है। प्रश्न यह उठता है कि ध्याान को कितने ही प्रकार से किया जा सकता है, तो प्रकृति के साथ ही ध्यान करने का क्या महत्व है।

प्रकृति का तटस्थ अवलोकन क्या

मनुष्य प्रकृति का ही एक अंग है। प्रागऐतिहासिक काल से मनुष्य को क्रमिक विकास में प्रकृति के साथ क्रमिक विकास के फलस्वरूप मनुष्य और प्रकृति का अन्तरंग सम्बन्ध रहा है। हावर्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक ई0 ओ0 विलसन [27] ने इस सम्बन्ध को बायोफिलिया का सम्बोधन दिया है, उनका मानना है कि मनुष्य में प्रकृति के साथ सम्बन्ध स्थापित रखने की मूलभूत
आवश्यकता हमारी आनुवांशिकी में निहित है। हॉलाकि मनुष्य अन्य जीव–जन्तुओं की भॉती प्रकृति पर निर्भर है, परन्तु अनुकूलन क्षमता एवं मानसिक प्रतिभा का उपयोग कर मनुष्य अपने प्राकृतिक वास से दूरी में भी सुखी जीवन व्यतित करता है। प्राकृतिक वास का अभिप्राय और जीव–जन्तुओं की भॉती रहने से नहीं है अपितु आत्मिक स्तर पर प्रकृति के साथ अपने अन्तरंग सम्बन्धों को महसूस करने से है, हॉलाकि मनुष्य का जीवन भी प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर है। प्रकृति के इस अन्तरंग सम्बन्ध को महसूस करने में अपनी व्यक्तिगत संवेदना की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। व्यक्तिगत संवेदनात्मक क्षमता का विकास भी ध्यान की प्रक्रिया का एक फल है। हेपबर्न [28] के अनुसार मनोविज्ञान के क्षेत्र से भी बायोफिलिया के आयाम को बल मिला है। मनोवैज्ञानिको का भी यह मानना है कि मनुष्य प्रकृति की कुछ विशेषताओं से अधिक अन्तरंगता महसूस करता है। मनुष्य प्राकृतिक सौन्द्रर्य से विशेष रूप से अभिभूत रहता है। हम लोग ऐसे भूदृश्यों को अधिक सुन्दर मानते है, जो हमारे क्रमिक विकास के दौर में लाभदायक सिद्ध हुये है [29]। मनुष्य ऐसे भूदृश्यों को अधिक अच्छा, मानता है जिसमें घास, पेड़, पानी इत्यादि का संयोग दिखता है। मनुष्य एक समाजिक प्राणी है। अतः एसे भूदृश्य जिसमें छोटे–मोटे रास्ते, खेत–खलिहान साधारण प्राकृतिक चीजों से बने घर एवं पालतु जानवरों आदि का समावेशी भी हों। हॉलाकि पिछले कुछ दशकों से शहरीकरण इस विस्तार से बढ़ा है कि शहरों के निवासी प्रकृति से दूर होते जा रहे है।
सुख–सुविधाओं से सम्पन्न शहर के जीवन में मनुष्य अपने को ऊपरी रूप से तो सुखी पाता है। किन्तु मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला कि प्रकृति से यह दूरी भीतर ही भीतर एक गहरे तनाव को जन्म देती है। अचेतन भावानात्मक प्रक्रियाओं के अध्ययन से यह पता चला कि मनुष्य को प्रकृति के साथ जुड़ना अनिवार्य है [29]।
केपलेन एवं केपलेन [30] के अध्ययनों से भी यह ज्ञात हुआ कि प्रकृति के साथ शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ प्रभावित होते है। अतः प्रकृति को सिर्फ एक जीवन के लिए आवश्यक संसाधन के रूप में ना देखकर यह भी समझना आवश्यक है

कि वह हमारे सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक है। प्रकृति के साथ अन्तरंग सम्बन्ध ध्यान की प्रक्रिया में सहायक होते है, एवं उसके फलस्वरूप एक गहन विश्रान्ति का अनुभव होता है। जिससे हमारी अन्तरात्मा का सम्बन्ध भी स्थापित हो जाता है।

विश्रान्ति एवं भावानात्मक सम्बन्धों की परिपक्वता–मनोवैज्ञानिकों के अनुसार किसी समय पर हम कैसे महसूस करते है। यह हमारी प्रसन्नता एवं भावानात्मक उदवेग के मिश्रण पर निर्भर करता है। जब प्रसन्नता एवं भावानात्मक उदवेग दोनों ही अपनी चरम सीमा पर हो तो तब एक उत्तेजक स्थिति रहती है। अगर दोनों ही बहुत कम हो तो निरसता की स्थिति रहती है। अगर केवल भावानात्मक उदवेग ही अधिक हो तो निराशा की स्थिति रहती है।

गैलिनडो एवं रोडरिग्यूज [29] ने चार सिथितियों का विवरण दिया है।

विश्रान्ति की स्थिति में प्रसन्नता अधिक है एवं भावानात्मक उदवेग बहुत कम है। प्रकृति विश्रान्ति की स्थिति को बढ़ावा देती है। यह रूचिकर अनुभूतियों को एक बहुत ही कोमल तरीकों से प्रभावित करती है। एक विचार यह भी है कि प्रकृति के सानिध्य में हम अपनी गहरी बैठी अचेतन मन की आवश्यकताओं को पूरा कर लेते है। जिससे हम शान्ति महसूस करते है। सौन्द्रर्यशास्त्र के अनुसार सिरोईस [31] अगर किसी वस्तु के सानिध्य में हमें अपनी अचेतन मन की कोई इच्छा पूर्ण होती दिखती है तो हम उस वस्तु को सुन्दर मानते है। अचेतन मन की इच्छायें कभी इतरी गहरी दबी होती है कि हम प्रयत्न करके उनको पूर्ण नहीं कर सकते। जैकब [32] ने इस बारे में लिखा है कि बिना चेतन ग्रहण बोध के भी संज्ञान सम्भव है। दृष्टा किसी चीज को सहज रूप से ना देख पाने पर भी अचेतन रूप से जानकारी कर लेता है। मस्तिष्क मात्र से प्रत्यक्ष ज्ञान एवं भावानात्मक ज्ञान की प्रणाली अलग–अलग होती है जो समान्तर रूप से चलती है जिसमें से एक चेतन प्रत्यक्ष ज्ञान प्रदान करता है एवं दूसरा अचेतन रूप से हमकों प्रभावित करता है। मस्तिष्क के बारे में यह वैज्ञानिक खोज यह सिद्ध करती कि हम अचेतन रूप से बहुत कुछ ऐसा ग्रहण करते है जो प्रत्यक्ष नहीं दिखता है। इस वैज्ञानिक तथ्य के प्रकाश में आने के बाद से ही यह माना जाने लगा है कि हमारे सीखने एवं व्यवहार की क्षमता अवचेतन रूप से भी सम्भव है। इसी बात को आगे बढ़ाते हुए हम जब प्रकृति के साथ बिना किसी वैचारिक दृष्टिकोण के अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित करते हैं तो प्रकृति हमें अवचेतन रूप में भी भावानात्मक रूप से प्रभावित करती है। हमारी कुछ भावानात्मक आवश्यकतायें प्रकृति हमारे अनभिज्ञ रहते हुए भी पूरा करती है। यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है। कि मस्तिष्क का अनावश्यक प्रयोग हमारे प्राकृतिक अन्तरंग सम्बन्ध बनने में अवरोध उत्पन्न कर सकता है और उतनी गहन विश्रान्ति के अनुभव से हमें वचिंत रख सकता है। हमारी गहरी भावानात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति से हमें एक आन्तरिक सहृयता और आनन्द का अनुभव होता है। यही कारण है कि हम लोग जब प्रकृति के साथ अथवा किसी भी क्रियाकलाप में जब इतना सरोबोर हो जाते हैं कि हमे समय का और अन्य किसी भी बात का खयाल नहीं रहता हैं तो उसमें एक असीम आनन्द का अनुभव होता है। ऐसे समय में व्यक्ति स्वयं को अन्यन्त जिम्मेवार अनुभव करता है और यह जिम्मेवारी की भावना ही पूर्ण स्वात्यता की परिचायक है। ऐसे व्यक्ति भी अपने प्रति अति संवेदनशील तो होता ही है और दूसरों की स्वात्यता के प्रति भी अति संवेदनशील होता है। प्रकृति के प्रति यह संवेदनशीलता ही हमारे व्यवहार को मूलतः परिवर्तित करने का स्रोत है।

व्यवहार एवं स्वभाव अनुकूलन

भावनायें, मनोदशा, धारणायें हमारी प्रेरणा के मूल स्रोत है। मनोविज्ञान में एक प्रचलित सिद्धान्त ऐफेक्ट इनफयूजन मेकेनिज्म (ए0 आई0 एम0) है। ऐफेक्ट का तात्पर्य–भावनाओं, मनोदशा एवं धारणाओं के समिश्रण से है। फोरगास [33] के अनुसार परिस्थिति के अनुसार हम अपने मन की गहराइयों से तुरन्त पुराने अनुभवों एवं संस्मरणों को याद करते है और यह हमारी मनोदशा को प्रभावित करता है। मनोदशा हमारी सीखने की क्षमता और कार्य करने की प्रेरणा एवं सदव्यवहार को प्रभावित करती है। अतः विश्रान्ति के अनुभव की दौहरी आवश्यकता है। एक तो यह कि हम भावानात्मक सन्तुलन को प्राप्त करते है जो हमारी मनोदशा को प्रभावित करता है एवं मनोदशा को कार्य प्रभावित करती है। दूसरा लाभ यह है कि हमारी संवेदनात्मक क्षमता एवं जागरूकता में इजाफा होता है जो हमारी धारणाओं एवं प्रकृति को अनुकूल बनाती है। यह दोनों कारक हमें प्रेरणा देते हैं कि हम अपने वचन एवं कर्म का एकात्म करें और अवलोकन को केन्द के प्रति सहृदयता का अनुभव करें।

बेन्सन [34] ने यह सुझाव दिया है कि अवलोकन की गहन विश्रान्ति के क्षणों में व्यक्ति स्वयं को विस्तृत महसूस करता है एवं अवचेतन रूप से ही नये विचार एवं धारणायें ग्रंगण कर लेता है। इस परिस्थितिजन्य आनन्द के क्षण हमारी स्मृति का एक अहम हिस्सा बन जाती है। जोकि मनोदशा को अन्यन्त सकारात्मक रूप से प्रभावित करते है। प्रकृति के साथ अन्तरंग सम्बन्ध के इतने दूरगामी प्रभावों को देखते हुए ऐसा लगता हैं कि प्रकृति मेहज मात्र हमारे जीवन को पालने के स्रोत ही नहीं है अपितु हमारे अन्तरंग सम्बन्धों की भावानात्मक कड़ी भी है। गुढ़ पारिरिस्थतिकी विज्ञान (डीप इकोलाजी) में भी इसी प्रकार के विषय वस्तु चर्चा में है। यह सिद्धान्त यह दर्शाता है कि आत्महित से परे एकरूपता का विस्तार है। अतः जैव अखण्डता का अहसास होना मानवीयता का दयोतक है। गूढ़ पारिस्थितिकी के जनक नेस ने पर्यावरण के संदर्भ में सोन्द्रय को कर्तब्य से ऊपर की श्रेणी में रखने की सलाह दी है। उनका मानना था कि पर्यावरण को मात्र नैतिक मूल्यों से परे मनुष्य को सुन्दर कार्यप्रणाली के रूप में समझना चाहिए। सामाजिक नियम मानवीय सम्बन्धों को एक दिशा प्रदान करते हैं लोग एक दूसरे के साथ जुड़ते है। वक्त जरूरत पर काम आने के लिए, व्यक्तिगत रूचियों को पूरा करने के लिए एवं भावानात्मक सम्बन्ध बनाने के लिए इन्हीं नियमों में से कुछ को मुख्य मानकर सदाचार की श्रेणीं में शामिल किया जाता है। मनुष्य प्राकृतिक वस्तुओं को भी सामाजिक नियमों के अर्न्तगत लाता है। जैसा कि आप के बगीचे में कोई फूल खिला हो और में उसको तोड़कर अपने यहाँ गुलदस्ते में सजाने लगू तो यह सामाजिक रूप से सकारात्मक तभी माना जायेगा जब में आपसे पूर्व अनुमति प्राप्त कर लू। हॉलाकि आप अपने बगीचे में फूल खिलाने के लिए कितने ही कीटनाशकों अथवा ऐसे संसाधनों का उपयोग करें जोकि हमारे सामुहिक पानी पीने के स्रोतों को दूषित कर दें। तब भी आपको सम्भवतः अपने बगीचे में छिड़काव करने से में नहीं रोक सकता। अतः प्रकृति को सामाजिक नियमों में शामिल करने की एक बनावटी परिधी है और यह हमारी संवेदनात्मक क्षमता पर निर्भर करता है कि हम प्रकृति के कितने आयामों को उसकी परिधी के अन्तर्गत मानते है। यह मात्र एक ऐसा सवाल है कि हम प्रकृति को कितनी हिस्सेदारी देने को तैयार है।

देवाल एवं सिसियन [35] के अनुसार सदाचार जीवन में एक दूसरे के साथ पारस्परिक आदर–पूर्वक सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य है। तो प्रकृति को हम दूसरों से कैसे अलग रख सकते है। अतः राइडर [36] ने इस चर्चा को आगे बढ़ाते हुऐ सहज वास्तविकता की परिभाषा देने का प्रयास किया है। सहज वास्तविकता का तात्पर्य इस विषमता से है कि कोई मनुष्य वास्तव में किस प्रकार जीता है। वो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या किन्हीं अन्य कारणों से कैसा दिखना चाहता है। सहज वास्तवविकता उसको माना जायेगा जिसमें मनुष्य अपनी प्रकृति को समझ कर बाह्य कारकों के अनावश्यक प्रभाव से अपने को बचाकर सन्तुलित करने में सक्षम रहता है। अतः सहज वास्वतविकता एक आन्तरिक संतृति है जिसकी तुलना चरित्र के किसी एक घटक से की जा सकती है। अतः सहज वास्वविकता मात्र इस बात की स्वात्यता को उजागर करती है कि वह अपने वचन एवं कर्म में एकरूपता लाने की ओर प्रयासरत रहें। इससे लगता है कि सहज वास्वविकता हमारे ह्रदय परिवर्तन एवं कार्य की प्रेरणा को विस्तृत रूप से प्रभावित करती है। जिससे हम अपने व्यवहार को परिवर्तित करने में सफल हो सकते है। व्यवहारिक रूप से यह इस प्रकार देखने को मिलेगा कि हम प्राकृतिक अंगों के लिए अपने व्यवहार का समायोजन कर सकेगें। उदारहरणार्थ जैसे गाय को मेहज एक उत्पादक की तरह न देखकर जीव की तरह देखना। पाश्चात्य देशों में दुग्धशाला को एक औधोगिक इकाई के रूप में देखा जाने लगा था। गाय एवं पर्यावरण को ही नहीं बल्कि मानव को भी व्याधियों से ग्रसित होना पड़ा। ऐसे काफी देशों ने अब गाय को एक जीवधारियों के रूप में जो आवश्यकता है उनको पूर्ण करने के लिए नियम बनायें है। एक अन्य उदाहरण में काफी की खेती में वृक्षों का इस प्रकार मिलान आरम्भ किया गया है जिससे पक्षियों को अपने प्रजनन में कठिनाई का सामना ना करना पड़े। पक्षियों की किस्मों एवं संख्या का हमारी कृषि पारिस्थितिकी में अत्यन्त महत्व है। इसी प्रकार परागण की क्रिया में कीट–पंतगों, मधुमक्खियों, भवरों का योगदान। अतः अब हम खेती की प्रक्रिया में उनकी संख्या एवं समिश्रण को बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील है। सहज वास्वतविकता से ओत–प्रोत व्यक्ति स्वतः ही पर–जीव के प्राकृतिक आवास एवं व्यवहार के प्रति सजग रहता है। उसकी सामाजिक न्याय की परिधी में पर्यावरण का समायोजन स्वतः ही हो जाता है। प्रकृति का तटस्थ अवलोकन अपनी सहज वास्तविकता के साथ सम्बन्ध स्थापित कर गहन विश्रान्ति और आनन्द के साथ–साथ हमारी संवेदनात्मकता एवं परिपक्वता को बढ़ाता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विषय में मुख्य रूप से हम लोगों ने तीन सोपानों को जोड़ने का प्रयास किया है। पहला सोपान यह है कि प्रकृति मात्र एक संसाधन नहीं है जिससे हमे हवा, पानी, खाना इत्यादि प्राप्त होता है अपितु मानव के लिए आधारभूत भावानात्मक सम्बन्धों की एक कड़ी भी है। मानव स्वयं भी एक प्राकृतिक जीव है और उसकी आन्तरिक प्रकृति के साथ उसका अन्तरंग सम्बन्ध बहुत महत्वपूर्ण है जो जीवन में सहज वास्तविकता के लिए परम आवश्यक है। अतः दूसरा सोपान यह है कि बिना सहज वास्तविकता को जाने हम अन्धाधुंध बाह्य प्रभावों से प्रेरित कार्यशैली को अपनाकर दुनिया में प्राकृतिक सौन्द्रर्य को नष्ट कर रही है और साथ में उस आत्मिक आनन्द से वंचित रह रहे है। मूलभूत सुविधाओं के बावजूद जीवन में एक रिक्तता है जो प्रकृति के साथ अन्तरंग सम्बन्ध से भरी जा सकती है। इसी कड़ी में तीसरा सोपान यह है कि हमें इस संसाधन युक्त आधुनिक जीवन शैली में कुछ परिवर्तन लाने के लिए एक आन्तरिक संवेदनात्मक प्रेरणा की आवश्यकता है जो हमें समस्त जीवों के हितों में अपने व्यवहार को परिवर्तित करने की दिशा में प्रेरित कर सकें। यह व्यवहार परिवर्तन मानव समाज में देखने को मिल तो रहा है जैसा कि कई उदाहरणों से हम लोगों ने दर्शाया है परन्तु उस गति को त्वरित करने की और जीवन में सामानजस्य लाने की आवश्यकता और भी अधिक है। यह प्रेरणा हमें स्वतः ही उस गहन विश्रान्ति और आनन्द के क्षणों में हमें प्राप्त होती है। जब हम प्रकृति के साथ अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित कर लेते है। प्रकृति के साथ यह सम्बन्ध एक स्वतः प्रक्रिया है और मनुष्य को अपने जीवन में उसे एक विशिष्ट स्थान देने मात्र की देर है। प्रकृति के तटस्थ अवलोकन के अन्य सकारात्मक प्रभाव ध्यान प्रणालियों के समकक्ष है।

संदर्भ

1. क्रोम्पटन, टी. वेदर कोक्स एंड सिंगपोस्टः इनवारनमेण्ट मूवमेण्ट एट क्रोसरोड, डब्लयू0 डब्लयू0 एफ0 यूके, पी0पी0, 39. 2008.
2. बेरी, डब्ल्यू. द अनसेटीलिंग ऑफ अमेरिकाः कल्चर एंड एग्रीकल्चर. सैन फ्रांसिस्कोः सिरिया क्लब बुक. 1997.
3. लिओपोल्ड, ए. ए सैंड काउंटी अल्मनाकः विथ एसेज ऑन कोन्सरवेसन फ्रॉम राउण्ड रिवर न्यूयॉर्कः वेलनटाइन. 1949.
4. ओरे, डी. डब्ल्य. अर्थ इन माइण्डः ऑन एजुकेशन, एनवायर्नमेंटल, एंड द ह्यूमन प्रॉस्पेक्टस. वाशिंगटन, डी.सी. आइसलैंड प्रेस. 1994.
5. हेल्थ कौंसिल ऑफ द निदरलैण्ड एंड डच एडवाइजरी कौंसिल फॉर रिर्सच ऑन स्पैटियल प्लानिंग, नेचर एंड द एनवायर्नमेंट. नेचर एंड हेल्थ. द इन्फ्लुएंस ऑफ नेचर ऑन सोशियल, साइकोलॉजीकल एंड फिजीकल वेल–बीइंग. द हेगः हेल्थ कौंसिल ऑफ द निदरलैण्ड एंड आरएमएनओ, 2004, पब्लिकेशन नम्बर. 2004/09ई, आरएमएनआ एनआर ए 0 2 एई.
6. मेयर, एस0 एफ0, फ्रैनट्ज, सी0 एम0, बूंचलमेन.–सेनीकल, इ0 एंड के0 डोलीवर. "वाई ईज नैचर बैनीफिसीयल? द रोल आफ कनेक्टिडेनस टू नैचर" जे इनवारनमेण्ट एंड बिहेवियर, वाल 41, नम्बर 5, पी0पी0, 715–740. 2009.
7. वाग, सी. ई, एंड फ्रेडरिकसन, बी. एल. नाइस टू नो यूः पॉजिटिव इमोशन, सेल्फ–अदर ओवलेप, एंड कॉमप्लेक्स अंडरस्टैंडिंग इन द फार्मेशन ऑफ न्यू रिलेशनशिप. जरनल ऑफ पॉजिटिव साइकोलाजी, 1, 93–106. 2006.
8. हारकर, एल, एंड कैल्टनर, डी. एक्सप्रैशन ऑफ पॉजिटिव इमोशन इन वोमेन कोलेज ईयरबुक पिक्चर्स एंड दियर रिलेशनसीप टू पर्सनालिटी एंड लाइफ आउटकम्स अक्रॉस एडल्टहुड. जनरल ऑफ पर्सनालिटी एंड सोशियल साइकोलॉजी, 80, 112–124., 2001.
9. डाइनर, इ, निकरसन, सी. ल्यूकास, आर., सैंडविक, इ. डिसपोजिसनल एफेक्ट एंड जाब आउटकम्स. सोशियल इंडिकेटर्स रिर्सच, 59, 229–259., 2002.
10. डोयली, डब्ल्यू. जी. जेनटाइल. डी. ए. एंड कोहन, एस. इमोशनल स्टाइलए नसल साइटोकाइन्स, एंड इलनेस एक्प्रेशन आफ्टर एक्सीपेरिमेंटल राइनोवायरस एक्सोपोजर, ब्रेन, बिहेवियर, एंड इम्युनिटी, 20, 175–181., 2006.
11. रिचमैन, एल. एस.,कुबजेनस्काई. एल., मसलको, जे., कवासी, आई., चू, पी. एंड बोर, एम. पॉजिटिव इमोशन एंड हेल्थः

गोइंग बियॉन्ड द नेगेटिव. हेल्थ साइकोलॉजी., 24, 422–429., 2005.
12. डैनर, डी. डी., स्नोडोन, डी. ए. एंड फ्रीसेन, डब्ल्यू. वी. पॉजिटिव इमोशन इन अर्ली लाइफ एंड लोंगीविटीः फाइंडिंग्स फ्रॉम द नन स्टडी. जरनल ऑफ पर्सनालिटी एंड सोशियल साइकोलाजी, 80, 804–813., 2001.
13. मास्कोवीट, जे. टी. पॉजिटिव एफ्फेक्ट प्रेडिक्स लोअर रिस्क ऑफ ऐड्स मोर्टेलिटी. साइकोसोमैटिक मेडिसिन. 65, 620–626., 2003.
14. ओसटिर, जी. वी. मार्कीडेस, के. एस., ब्लैक, एस. ए. एंड गॉवडीन, जे. एस. इमोशन वेल–बीइंग प्रेडिक्स सब्सीक्वैंट फंक्शनल इंडिपेंडेंस एंड सर्वाइवल. जरनल ऑफ द अमेरिकन ग्रेटीएरिक्स सोसाइटी, 48, 473–478., 2000.
15. एनोनमियस, "माइन्डफूलनेस" इन कनटमप्लेटिव प्रैटिक्स हैंडबुक्स इन हॉयर एजूकेशनः ए हैंडबुक्स ऑफ क्लासरूम प्रैटिक्स, सेन्टर फॉर कनटमप्लेटिव माइन्ड इन सोसाइटी, नारथॉमपटोन, पी0पी0 152. 2008.
16. जेजोनक, ए0. "वट ईज कनटमप्लेटिव पेडेलॉजी" इन कनटमप्लेटिव प्रैटिक्स हैंडबुक्स इन हॉयर एजूकेशनः ए हैंडबुक्स ऑफ क्लासरूम प्रैटिक्स, सेन्टर फॉर कनटमप्लेटिव माइन्ड इन सोसाइटी, नारथॉमपटोन, पी0पी0 152. 2008.
17. रसतोगी, ए0. ऐक्सपिरिन्ससींग नैचर एस्थेटिकलीः ए मिन्स एंड एन ईंड, मास्टर'स थिसिस, यूट्रीच्ट यूनीवर्सटी, यूट्रीच्ट पी0 54. 2008.
18. हचरसन, सी0 ए0, सीपाला, एम0 ए0 एंड जे0 जे0 ग्रास,ण "लविगं–काइण्डनेस मडिटेशन इनक्रियेजेज सोसियल कनेक्टिडेनस" इमोशन, वालण 8, नम्बर, 5, पी0पी0, 720–724. 2008.
19. ब्रीवर, एम. बी. 2004. टॉकिंग द सोशियल ओरिजिन ऑफ नेचर सीरियसलीः टुवर्ड्स ए मोर इम्पेरिअलिस्ट सोशियल साइकालॉजी. पर्सनालिटी एंड साशियल साइकालॉजी रिव्यु, 8, 107–113.
20. बोउमैसटर, आर. एफ., लेरी, एम. आर. ए द नीड टू बिलोंगः डिजायर फॉर इंटरपर्सनल अटैचमेंट एज ए फंडामेंटल ह्यूमन मोटिवेशन. साइकोलाजीकल बुलिटिन, 117, 497–529., 1995.
21. ब्राउन, एस. एल. नेसे, आर. एम. विनोकुर, ए. डी. स्मीथ, डी. एम. प्रावाइडिंग सोशियल सपोर्ट मे बी मोर बेनीफिशियल देन रिसीविंग इटः रिजल्ट फ्रार्म ए प्रॉस्पेक्टीव स्टेडी ऑफ मोर्टेलिटी. साइकोलॉजीकल साइंस, 14, 320–327, 2003.
22. डीवृज, ए.सी. ग्लासपर, ई. आर. डेटीलियाअन, सी. ई. 2003. सोशियल मॉडयूलेशन ऑफ स्ट्रेस रिस्पांस फिजियोलॉजी एंड बिहेवियर, 79, 399–407.
23. ली, आर. एम., एंड रोबिन्स, एस. बी. द रिलेशनशिप बिटवीन सोशियल कनेक्टीडनैस एंड एंग्जायटी, सेल्फ–एस्टीम, एंड सोशियल आइडेंटिटी. जनरल ऑफ काउन्सेलिंग साइकोलॉजी, 5, 338–345., 1998.
24. हाउकले, एल. सी., मासी, सी. एम.ए बेरी, जे. डी. एंड कैसियपपो, जे. टी. 2006. लोनलीनैस इज ए यूनिक प्रेडिकेटर ऑफ ऐज–रिलेटेड डिफरेंस इन सिस्टोलिक ब्लड प्रैशर. साइकोलॉजी एंड एजिंग., 21, 152–164.
25. बेन्सन, एच, एण्ड डब्ल्यू प्राक्टर, रिलेक्सेशन रिवोल्यूशलन, न्यूयॉकः स्क्राइबनर. 2010.
26. रूबिया, के0. श्द न्यूरोबायोलाजी ऑफ मेडिटेसन एण्ड ईट्स किलिनिकल ऐफेक्टिवनेस ईन साइकाईट्रिक डिसआडर, बायोलाजीकल साइकोलाजी, 82ः 1–11. 2009.
27. विलसन, ई0 ओ0. बायोफिलिया, हार्वड यूनीवर्सटी प्रेस, पी0पी0 157. 1984.
28. हेपबर्न, आर0 डबल्यू0. "ट्रावियल एंड सिरियस इन ऐपलिकेशन" इन सलिम केवाल एंड इवान गैसकैल (इडस), लैण्डस्केप, नैचूरल ब्यूटी एंड द आट्स, कैम्ब्रीज यूनीवर्सटी प्रेस, पी0पी0, 65–80. 1993.
29. गैलिनडो, जी0 एम0 पाज एवं रोडरिग्यूज, जे0 ए0 सी0 "इनवारनमेण्टल ऐसथेटिक्स एंड साइकोलॉजीकल वेलबियिंग्सः रिलेसननसिप बिटवीन प्रिफेर्न्स जजमेन्ट फॉर अर्बन लैण्डस्केप एंड अदर रिलीवेण्ट एफेक्टिव रिसपोन्स" साइकोलॉजी इन स्पेन, वॉल0 2000, न0ब0, 4, पी0पी0, 13–27, 2000.
30. केपलेन, आर0 एंड केपलेन, एस0. द एक्सपिरियन्स ऑफ नैचरः ए साइकोलॉजीकल प्रैसपेक्टीव, कैम्ब्रीज यूनीवर्सटी प्रेस, पी0पी0, 340. 1989.
31. सरोईस, एफ0 जे0. "ऐसथैटिक्स एक्सपिरियन्स" ईटं जे साइकोलॉजीकल, नम्बर 89, पी0 पी0, 127.142 2008.
32. जैकब, एम0 एच0. प्रोडोक्शन ऑफ माइण्डस्केप्सः ए कामप्रिहेन्सीव थियोरी ऑफ लैण्डस्केप एक्सपिरियन्स पी0एच0डी0 डिजरटेसन, वागिननगन यूनीवर्सटी, पी0पी, 268., 2006.
33. फोरगास, जे0 पी0. शफिलिंग ईज बिलिविंग? द रोल ऑफ प्रोसेसिंग स्ट्रेटेजीज इन मेडिएटिंग ऐफेक्टिव इनफ्यूएन्सस ऑन बिलिफ्सश ईन ईमोशन एडं बिलिफ्सः हॉव फिलिंग्स इनफ्यूएन्सस थॉट्स,. 2000.
34. बेन्सन, सी. 1993. द अबर्सोब्ड सेल्फः प्रैग्मैटिस्म, साइकोलॉजी एंड एस्थेटिक एक्सपीरियंस, हर्टफर्डशायर, हार्वेस्टर पी.पी.
35. देवाल बी0 एंड सिसियन, जी0. "डीप एकोलॉजी" इन डोनाल्ड वेनडिवेर एंड क्रिसटाइन प्रेसी (इडस). 2003.
36. राइडर, बी0.एन. एक्सपलोरेशन ऑफ द वैल्यू ऑफ नेचूरलनैस एडं वाइल्ड नेचर जे ऑफ एग्रीकल्चरल एण्ड इनवायरमेंटल ऐथिक्स, 20ः 195–213. 2007.